चयनित हिंदी फिल्मों में होमोसेक्शुअलिटी का रूपांकन : (दोस्ताना, गर्लफ्रेन्ड, फायर, पेज थ्री)

प्रियंका शर्मा

समाज, होमोसेक्स्शुलिटी और पितृसत्ता :

दुनिया की लगभग सभी सभ्यताओं में महिला और पुरुष के रिश्ते को ही स्वीकारा गया और इसे ही वैध और पवित्र माना गया। इसके बावजूद इन रिश्तों के इतर महिला- महिला, पुरुष-पुरुष और ट्रांसजेंडर रिश्ते हर काल में मौजूद रहे हैं। पुराने साहित्य में ऐसे रिश्तों के होने के तमाम संकेत और उदाहरण मिलते हैं। पर इन रिश्तों को सामज ने वैधता नहीं दी। हमेशा ही नीची नजर से देखा गया और मुख्य समाज से काट दिया गया। कहीं-कहीं दंड का प्रावधान भी रहा है। लेकिन पितृसत्ता और मानवीय चुनाव के प्रति बढ़ती समझ के साथ वर्तमान समय में बहुत सारे देशों में होमोसेक्शुअल संबधों को हेट्ररोसेक्शुअल संबंधों की तरह ही वैध करार दे दिया गया है। अब कई देशों में ऐसे लोग साथ रह सकते हैं, शादी कर सकते हैं।

भारत में होमोसेक्शुअलिटी गैरकानूनी है। बहुत से लोगों के विरोध और कानूनी लड़ाई करने बाद इन संबंधों को 2009 में दिल्ली हाईकोर्ट ने गैर कानूनी नहीं माना। लेकिन मामला सुप्रीम कोर्ट में गया और 2014 में फिर से होमोसेक्शुलिटी को गैरकानूनी करार दे दिया गया। बावजूद इसके कि वात्यायन के कामसूत्र में, स्कंद पुराण, भगवत पुराण आदि में ऐसे संबंधों के होने के प्रमाण मिलते हैं इन संबंधों को पश्चिम आयातित के रूप में देखा गया और ऐसे संबंधों की कड़ी निंदा की गई।

हम अब इसको समझने की कोशिश करते हैं कि क्यों जहां का समाज ज्यादा पितृसत्तात्माक और फ्यूडल होता है वहां ऐसे रिश्तों को अपराध माना जाता है? दरअसल, पितृसत्तात्मक समाज में संबंधों और जोड़ों को अपोज़िट बाइनरी में ही देखा जाता है जिसमें स्त्री और पुरुष के बीच ही सेक्शुअल और प्रेम का रिश्ता मान्य होता। इस व्यवस्था को संचालित करने वाली संस्थाओं के केंद्र में परिवार होता है। जहां से इस व्यवस्था को चलाये रखने के लिए स्त्री-पुरुषों (जेंडर) को गढ़ा जाता है। जो कि इस व्यवस्था को आगे बढ़ाते हैं। इनमें से एक भी कड़ी के बिखरने से पितृसत्तत्मक व्यवस्था को चुनौती मिलती है और उसके टूटने का खतरा पैदा होता है इसीलिए दुनिया के कोई भी समाज इस बाईनरी व्यवस्था से हट कर बनाये गये संबंधों को स्वीकृति नहीं देता है। हेट्रोसेक्शुअल रिश्तों के अलावा महिला महिला, पुरुष-पुरुष और ट्रांसजेंडर व्यक्तियों के बीच बना कोई भी रिश्ता समाज के सामने यही चुनौती पेश करते हैं। लेकिन जैसा कि हर नियम के अपवाद होते हैं या तोड़ने वाले होते हैं। और हर काल में होते हैं।

सिनेमा में होमोसेक्शुअलिटी की शुरुआत :

हिंदी सिनेमा में लंबे समय तक चुप्पी बनी रही है और एक तरह का निषेध भी रहा है ऐसे विषयों के प्रति। लेकिन जब से सेक्स और सेक्शुअलिटी के चित्रण थोड़ा खुलापन आया तब से होमोसेक्शुअल संबंधों पर छिटपुट दृश्य सामने आये। मस्त कलंदर (1991), सड़क (1991), तमन्ना (1997), दरम्यान (1997,) बॉम्बे (2005), मर्डर (2011), आदि कई फिल्मों मे होमोसेक्शुअल चरित्रों को दिखाया गया लेकिन इन ज्यादातर को कॉमिक रचने के लिए (खासकर हिजड़ा चरित्रों का काम ही कॉमिक क्रिएट करना बन गया), कमर्शियल फायदों के लिये ही इस्तेमाल किया गया। हिंदी सिनेमा में इसको अलग-अलग तरह से देखा गया है। जैसे हास्य पैदा करने के लिए, हिजड़ा के पर्याय के रूप में, एक तरह की मानसिक बीमारी के रूप में और बहुत ही कम होमोसेक्शुअल लोगों की जिंदगी की कठिनाईयों का जायजा लेने के रूप में भी। इन फिल्मों में अल्पसंखयक सेक्सुअलिटी को दिखाया तो गया लेकिन वो फिल्म की कहानी का मुख्य बिंदु नहीं रही। पहली बार

फायर में और फिर पेज थ्री में इन लोगों को मुख्य भूमिकाओ में रखा गया। कहानी इन्ही किरदारों के जीवन, सम्बंधों की पड़ताल करती नज़र आई। दोस्ताना और गर्लफ्रेंड की कहानी भी समलैंगिक रिश्तों और किरदारों के इर्द गिर्द बुनी गई है। और ये मुख्यधारा में भी आती हैं इसीलिये प्रस्तुत पेपर में इन चार फिल्मों को अध्ययन के लिए चुना गया है। अब यहां सवाल आता है कि इन किरदारों और उनके जीवन को कैसे चित्रित किया गया है। ये चित्रण क्या बयां करता है। बॉलीवुड ने इन मुद्दों को किस नज़रिये से दर्शकों के सामने रखा है।

हास्य या भय में ही दिखाना :

होमोसेक्शुअलिटी के मुद्दे को फिल्मों में शामिल किये जाने के समय से ही एक खास तरह की प्रवृत्ति हिंदी सिनेमा में दिखाई देती है। ऐसे किरदार हमेशा हंसी के पात्र होते हैं। उनके हाव-भाव और बातें लगभग सभी में हास्य पैदा होता है। दोस्ताना में जब जॉन (अब्राहम) और अभिषेक (बच्चन) पहली बार एक 'गे' से मिलते हैं तो वह मजकिया सा है, वह आंसू नाक बहाते हुए रो रहा है कि उसका बॉयफ्रेंड कही दूर चला गया। जॉन और अभि की अपनी खुद के जीवन में कितनी बार ऐसी हास्य स्थिति पैदा होती है। जैसे अभि की मां जब उसके पार्टनर को बेटे की बहू मानकर उसे चूड़िया देती है, और उससे गृह प्रवेश का शगुन करवाती है। लेकिन जब इस का अधिक विस्तार होता है और लेस्बियन के बारे में फिल्म बनती है तो उसे एक किस्म का हॉरर दिखाते हैं। इशा कोप्पिकर और अमृता अरोरा के रिश्ते में यही चित्रण देखने को मिलता है। ईशा समलैंगिक है और अमृता को पसंद करती है लेकिन अमृता समलैंगिक नहीं है और वह एक लड़के से प्यार करने लग जाती है। अब इस लड़के को ईशा अपनी राह का कांटा मानकर उसे किसी भी तरह हटाना चहती है। वह उसे मार डालने की भी कोशिश करती है। यहां ईशा को सिर्फ इसीलिए खलनायक की भूमिका में दिखाया गया है क्योंकि वह समलैंगिक है और अमृता को पसंद करती है। वह अमृता का खयाल रखती है लेकिन वह नहीं चाहती कि अमृता किसी लड़के को पसंद करे या उससे शादी करे। और इसके लिए वह किसी भी हद तक अपराधी बन सकती है। वह अमृता को बताती भी नहीं कि उसे पसंद करती है। लेकिन उसे अपने पास रखने के लिए किसी भी तरह का काम करती है। वह अमृता के प्रेमी पर जानलेवा हमला करती है, अमृता से झूठ बोलती है यहां तक कि अमृता के साथ जबरदस्ती भी करती है। कुल मिलाकर समलैंगिक ईशा को फिल्म में सिनिकल और ज़ाहिल किरदार के रूप में दिखाया गया है इससे कोई भी व्यक्ति डरेगा और नापसंद करेगा। कुछ कमोबेस ऐसी ही स्थिति पेज थ्री में भी होती है। कोंकणा (सेन) का दोस्त उसके ही प्रेमी के साथ समलैंगिक रिश्ते में पकड़े जाते हैं। कोंकणा का बहुत नजदीकी दोस्त और प्रेमी उससे धोखा करते हैं। उसे इस घटना से एक सदमा लगता है और यहीं यह संदेश भी दर्शकों को जाता है कि समलैंगिक धोखेबाज़ होते हैं जिन पर विश्वास नहीं किया जा सकता है। होमोसेक्शुअल्स की जो तस्वीर ये फिल्में बनाती हैं वो झूठे, धोखेवाज़, पागल और ज़ाहिल लोगों की छवि पेश करती हैं। दूसरे शब्दों में कहा जाये तो ऐसे चरित्रों को या तो विदूषक के रूप में या खलनायक के रूप में चित्रित किया जाता है।

पितृसत्ता और स्टीरियोटाईप छायांकन :

इन चयनित फिल्मों में जहां एक तरफ लंबे समय से चली आ रही होमोसेक्शुअलिटी के प्रति चुप्पी को तोड़ने की और सिर्फ महिला-पुरुष जेंडर को ही मुख्यता देने की स्टीरियो टाईप प्रवृत्ति को तोड़ने की कोशिश की गई है लेकिन फिर आगे चल कर यही फिल्में एक दूसरे तरह के स्टीरियो टाईप में इन चरित्रों को ढ़ालती भी हैं। ये फिल्में 'गे' और 'लेस्बियन' चरित्रों के जोड़ों को महिलापन (femininity) और पुरुषपन (masculinity) के साथ चित्रित करते हैं। दोस्ताना फिल्म में जॉन अब्राहम और अभिषेक बच्चन की गे जोड़ी में जॉन पुरुष की तरह रहता है लेकिन अभिषेक के हाव भाव, हाथ मटका के और शरमा कर जॉन के कंधे पर सिर रखने, बार बार उसे छू कर, हंस हंस कर बोलने का तरीका महिलापन को दिखाता है। वह महिला गुणों वाला है और उसका पार्टनर पुरुष के गुणों वाला। पेज़ थ्री में भी कोंकणा का प्रेमी पुरुषपन लिए व्यवहार करता है। लेकिन उसका 'गे' पार्टनर महिलाओं जैसी चाल चलता है, लड़कियों से पक्की

दोस्ती करता है और आवाज़ में भी कोमलता है। इसी तरह गर्लफ्रेंड में ईशा कोप्पिकर का व्यवहार लड़कों सा दिखाया है। वह कराटे करती है, लड़कों से कंपटीशन करती है, अपेक्षाकृत मसल्ल्स हैं और पैसे कमाती है। जबकि उसकी दोस्त पूरी तरह से फेमिनाईन है और एक मॉडल है। बाद में ईशा अपने बाल भी लड़कों जैसे काट लेती है। वह कंट्रोलिंग है। मर्दाना गुणों वाली है। इस तरह का चित्रण हालांकि फायर में नहीं मिलता लेकिन उसमें दूसरे तरह का स्टीरियों टाईप दिखाया गया है। जबकि यह पूरी तरह सच नहीं होता और ज्यादातर समलैंगिक लोग ऐसे नहीं दिखते।

ज्यादातर लेस्बियन रिश्तों के बनने का कारण उन महिलाओं की अपने पुरुष साथी के साथ असंतुष्टि की वजह से बनता है। दूसरा कारण जो गर्लफ्रेंड में बताया गया है कि बचपन में हुए चाईल्ड अब्यूज़ की वजह से लेस्बियन बनते हैं। यानि कि उनकी भावनाएं और एहसास हेट्रोसेक्शुअल लोगों जैसे नहीं हैं। वे एक अब्नार्मलिटी का शिकार हुए हैं इसलिए ऐसे हैं। फायर में शाबाना आज़मी और नंदिता दास दोनों के ही पति उनसे दूर हैं। नदिता दास का पति किसी दूसरी महिला के साथ संबंध में है और नंदिता को खुश नहीं रखता और शबाना का पति गंगा के किनारे घाट पर प्रवचन कहता है। वह भी अपनी पत्नी पर ध्यान नहीं देता और इस तरह दोनों देवरानी-जेठानी की आपस में घनिष्टता हो जाती हैं जो कि अंतत: लेस्बियन हो जाती हैं। हालांकि दुनिया की हक़ीकत कुछ और ही है। वास्तव में लेस्बियन होने और जीवन में पुरुषों के साथ हुए किसी बुरे अनुभव का कोई आपसी संबंध नहीं होता। ऐसी कई कहानियां है जो कहती हैं कि किसी अब्नार्मलिटी की वजह से महिलाएं लेस्बियन नहीं होतीं और न ही पुरुष गे। फायर फिल्म की कई नारीवदियों ने इसीलिए आलोचना भी की कि क्या लेस्बियन होना किसी बुरे अनुभव का परिणाम है? या फिर पुरुष अपनी पत्नियों की सेक्शुअल जरूरतों को नकार देंगे तो वे लेस्बियन हो जायेंगी? इससे इतर लैंगिक रिश्तों में पितृसत्ता के प्रति जो स्वाभाविक चुनौती होती है खतम हो जाती है।

स्तरीकरण :

इन फिल्मों के अध्ययन से एक और मुख्य बिंदू सामने आता है कि होमोसेक्शुअल रिश्तों की स्वीकार्यता में एक खास प्रवृत्ति नज़र आती है। ये है लेस्बिअन और गे और फिर ट्रांसजेंडर लोगों के स्तरीकरण का। ये स्तरीकरण फिल्मों के चरित्रों में भी है और बाहर फिल्मों के नाम पर होने वाले विरोधों, बहसों में भी। फिल्मों में ज्यादातर लेस्बियन को हिंसक और भयानक दिखाना उनके प्रति अस्वीकार भाव को दिखाता है। गर्लफ्रेंड की इशा से डरा जा सकता है जबकि दोस्ताना के जॉन अभि पर हंसा जा सकता है, पेज थ्री के होमोसेक्सुअल चरित्र भी उतने भयानक नहीं है, वो कोंकणा के साथ धोखा करते हैं पर किसी को नुकसान नहीं पहुंचाते। मतलब कि गे रिश्तों को समाज में लेस्बियन की अपेक्षा ऊंचा माना जाता है। गे के लिए समाज में एक मौन लेकिन स्वीकार भाव दिखता है। इसका एक बड़ा उदाहरण है फायर फिल्म के रिलीज पर हुआ हिंदूवादी संगठनों की तरफ से विरोध। जहाँ एक देवरानी जेठानी का सेक्शुअली जुड़ जाना महिलावादी, शिव सेना और बजरग दल के लिए सांसकृतिक उत्तेजना और विरोध का मुद्दा बन जाता है। जबकि दोस्ताना पेज थ्री और यहाँ तक कि 'आई एम' में दिखाये गये 'गे' रिश्ते उनके लिए साधारण से हैं, जिन पर किसी भी तरह की उत्तेजना या प्रतिक्रिया नहीं होती। इन रिश्तों को चुपचाप देख लिया जाता है और किनारे कर दिया जाता है लेकिन लेस्बियन की बात आते ही मुद्दा स्वीकार के बाहर हो जाता है और तब संस्कृति की दुहाई से लेकर आक्रमकता का रुख भी अपनाया जाता है। लगभग ऐसा ही रुख फिल्मकारों का इन रिश्तों को फिल्माने के प्रति और चरित्र गढ़ने में दिखता है। गर्लफेंड में ईशा कोप्पिकर जबरदस्ती करती नजर आती है जबकि दोस्ताना, पेज थ्री में सहमति आधारित रिश्ते हैं। ऐसे चित्रण हमें सुझाव देते हैं कि लेस्बियन के माफिक 'गे' ज्यादा बेहतर है। 'गे' क्योंकि पुरुषों का पुरुषों से रिश्ता होता है जो कि पहले ही विशेषाधिकार प्राप्त और आत्मनिर्भर होते हैं इसीलिए उनको इतरलैंगिक रिश्तों में सबसे ज्यादा सम्मान की नज़र से देखा जाता है और समाज से भी उनको एक मौन सहमति मिल जाती है। लेकिन वहीं जब लेस्बियन के बारे में बात हो तो उन्हें

कमतर और नीचा माना जाता है, दूसरा उनके इतरलैंगिक संबंधों को परिवार टूटने के कारण के रूप में भी लिया जाता है जैसे कि फायर में अंतत: दिखाया गया है, तो महिलाओं के महिलाओं के साथ संबंधों को अस्वीकार कर दिया जाता है। इसीलिए गर्लफ्रेंड और फायर में चित्रित हुई लेस्बियन महिलाएं या खुद में ही डर पैदा करने वाली हैं या फिर उनकी वजह से परिवार बिखरता है जबकि दोस्ताना और पेज थ्री के गे चरित्रों में कॉमिक की रचना है उनका नोर्मलाईजेशन किया गया है या फिर 'गे' को ऐसे रिश्तों के रूप में चित्रित हैं जिनसे किसी को नुकसान नहीं पहुंचाते।

उपसंहार :

इस तरह हमने देखा कि हालांकि हिंदी सिनेमा में होमोसेक्शुलिटी के प्रति इतनी लंबी चुप्पी टूटी तो है, कुछ स्वीकर्यता इन रिश्तों और लोगों के लिए बनी तो है पर इसमें भी एक कनफ्लिक्ट है। अभी तक होमोसेक्शुअल मुद्दों के प्रति सवेदनशीलता और दिली स्वीकार्यता नहीं बन पाइ है। जिसके परिणाम स्वरूप इन रिश्तों को एक तरह के सांचों में गढ़ने की कोशिश की जाती है और इससे हिंदी सिनेमा जगत का होमोसेक्शुलिटी के प्रति पितृसत्तात्मक रुख का भी पता चलता है। फिर भी इन फिल्मों ने जिस चुप्पी को तोड़ा है वह भी महत्वपूर्ण है और आगे के लिए ऐतिहासिक भूमिका अदा करेगा।

संपर्क: प्रियंका शर्मा शोधार्थी नाट्यकला विभाग पांडिचेरी विश्वविद्यालय पांडिचेरी 605014